श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ–जयतः

श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं तदन्तर्गत भारतव्यापी
श्रीगौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता, श्रीकृष्णचैतन्याम्नाय
दशमाधस्तनवर श्रीगौड़ीयाचार्य केशरी
ॐविष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री

श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके
अनुगृहीत

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज
द्वारा
श्रीचैतन्य महाप्रभुके आविर्भावके पाँच–सौ वर्ष पूर्ण होनेके
उपलक्ष्यमें १९८६ ई० में लिखित प्रबन्ध

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन

प्रथम संस्करण— ५,००० प्रतियाँ, श्रीविश्वरूप महोत्सव, २०१२
द्वितीय संस्करण— ७,५०० प्रतियाँ, मौनी अमावस्या, २०१५

प्रकाशन-मण्डली (द्वितीय संस्करण)

सम्पादन एवं प्रूफ-संशोधन	—	माधवप्रिय दास, अमलकृष्ण दास
अनुवाद एवं टाइप	—	सञ्जय दास
ले-आउट	—	शान्ति दासी
कवर-डिजाइन	—	कृष्णकारुण्य दास, कमलाकान्त दास
रेखाचित्र	—	श्यामरानी दासी, प्रभावती दासी, निश्चिन्तया दासी
आभार	—	मञ्जरी दासी, वैजयन्ती-माला दासी, सुन्दरगोपाल दास

प्राप्तिस्थान

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ
दानगली, वृन्दावन (उ॰प्र॰)
☎ ०९७६०९५२४३५

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
मथुरा (उ॰प्र॰)
☎ ०८०५७६७७३९९

श्रीरमणविहारी गौड़ीय मठ
बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली
☎ ०९७१७३२११४२

श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ
राधाकुण्ड रोड, गोवर्धन (उ॰प्र॰)
☎ ०९६२७४२६३४३

जयश्री दामोदर गौड़ीय मठ
चक्रतीर्थ रोड, जगन्नाथपुरी, उड़ीसा
☎ ०६७५२-२२७३१७

श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
कोलेरडाङ्गा लेन
नवद्वीप, नदीया (प॰बं॰)
☎ ०९७३४८२५३६२

श्रीराधामाधव गौड़ीय मठ
२९३, सैक्टर-१४
फरीदाबाद, हरियाणा
☎ ०९९११२८३८६९

खण्डेलवाल एण्ड सन्स
अठखम्भा बाजार,
वृन्दावन (उ॰प्र॰)
☎ ०५६५-२४४३१०१

Please visit us at www.purebhakti.com

समर्पण

हम यह ग्रन्थ श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्ट संस्थापक—श्रील रूप गोस्वामी द्वारा प्रवर्त्तित विशुद्ध–व्रजरस–धाराको वर्त्तमान समयमें सम्पूर्ण विश्वमें अत्यधिक प्रभावशाली पद्धतिसे संरक्षित एवं प्रवाहित करनेवाले श्रीमन्महाप्रभुके नित्य परिकर अपने उन परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके श्रीकरकमलोंमें समर्पित करते हैं, जिन्होंने इस जगत्के प्रति श्रीचैतन्य महाप्रभुकी करुणा एवं उनके दानकी विषय वस्तुको अत्यधिक सरल, सहज एवं बोधगम्य रूपमें सर्वत्र मुक्तकण्ठसे वितरित किया है।

प्रकाशन–मण्डली

सूचीपत्र

निवेदन .... क
मङ्गलाचरण १
स्वयं-भगवान् एवं उनके अंश १
स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णका अन्य एक नित्य-स्वरूप..... २
श्रीमद्भागवतमें श्रीगौरहरिका प्रसङ्ग.................... २
मुण्डक-उपनिषदमें श्रीगौरहरिका प्रसङ्ग ३
स्वयं-भगवान् दो भिन्न व्यक्ति नहीं.................... ४
एकमात्र स्वयं-भगवान् ही अन्यान्य भगवत्-स्वरूपोंको प्रकाशित करनेमें समर्थ.................................... ५
श्रीगौरहरिकी अद्भुत करुणाका विकास.................. ६
भगवान्की करुणाके प्रभावसे ही उनका चिन्तन, स्मरण और अनुभव सम्भवपर ६
भगवत्-विमुख जीवोंको भगवत्-उन्मुख करानेमें ही करुणाका विकास.................................... ७
प्रपञ्चमें समस्त भगवत्-अवतारोंके अवतरणका मूलकारण ७
श्रीगौरहरिके आविर्भूत होनेका कारण अन्यान्य भगवत्-अवतारोंके आविर्भूत होनेके कारणसे विलक्षण......... ८
श्रीगौरहरिके अवतरणके तीन अपूर्व उद्देश्य............ ८
श्रीगौर-आविर्भावके कारणोंमें ही 'करुणा' शब्दका स्पष्ट उल्लेख.. १०
श्रीगौरहरिकी करुणाकी अभूतपूर्व विशेषता १०

(१) एकमात्र श्रीगौरहरि द्वारा ही सभीको भक्ति प्रदान १०
(२) श्रीगौरहरि योग्यता विचार किये बिना प्रेम प्रदान करनेवाले १२
(३) श्रीगौरहरिका अपनी करुणाशक्तिके प्रति आत्मसमर्पण १६
(४) श्रीगौरहरिकी करुणाका पूर्ण रूपसे प्रस्फुटित होना.. १७
(५) जीवोंके उद्धारके लिए श्रीगौरहरिकी विशेष व्याकुलता.. १९
(६) श्रीगौरहरि—रसिकशेखर और परमकरुण २०
(७) श्रीगौरकरुणाकी चमत्कारिक विशेषता.......... २१
श्रीचैतन्य महाप्रभुका परमदिव्य दान—परकीया-भाव.. २३
श्रीचैतन्य महाप्रभुका संक्षिप्त जीवन-चरित्र.............. २९
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका संक्षिप्त परिचय.. ३४

निवेदन

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्ग-गान्धर्विका-गिरिधारी-श्रीश्रीराधाविनोद-विहारीजीकी अहैतुकी करुणासे श्रीचैतन्य महाप्रभुके भक्तों एवं परमार्थमें रुचियुक्त व्यक्तियोंके समक्ष "श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता" नामक प्रबन्धको परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी अप्राकृत-वाणीके विस्तार एवं प्रचार-प्रसारके उद्देश्यसे लघु-पुस्तिकाके आकारमें प्रस्तुत करते हुए हम स्वयंको अत्यन्त धन्य अनुभव कर रहे हैं।

श्रीमद्भागवत और अन्यान्य वैदिक शास्त्रोंमें कलियुगमें भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभुके गुप्त रूपमें आविर्भूत होनेका प्रतिपादन किया गया है। उन्हीं श्रीचैतन्य महाप्रभुके आविर्भावके पाँच-सौ वर्ष पूर्ण होनेके उपलक्ष्यमें १९८६ ई॰ में श्रीमन्महाप्रभुके एकान्तिक निजजन हमारे श्रील गुरुदेवने इस प्रबन्धकी रचना की थी। श्रील गुरुदेवके विश्वव्यापी प्रचारका एकमात्र उद्देश्य एवं मुख्य वैशिष्ट्य स्वयं-भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णसे अभिन्न श्रीचैतन्य महाप्रभुके अत्यधिक करुणामय अवतरणके मुख्य कारण एवं उनके द्वारा आचरित एवं प्रचारित विचारधाराके अन्तर्निहित (गूढ़) भावोंकी महिमा और श्रेष्ठताको जनसाधारणके समक्ष सरल और बोधगम्य रूपमें प्रकाशित करना था।

श्रील गुरुदेव श्रीमन्महाप्रभुकी विचारधारामें गौड़ीय-दर्शनके अनन्त वैशिष्ट्योंके अपार एवं गम्भीर समुद्र-स्वरूप थे। उन्होंने इन वैशिष्ट्योंको अतिसुन्दर एवं सहज-सरल रूपमें जगत्-वासियोंके निकट प्रकटित किया है। उदाहरण-स्वरूप उनके द्वारा इस जगत्के प्रति श्रील रूप गोस्वामीके दानकी महिमाका अथक रूपसे वर्णन, श्रील सनातन गोस्वामीके श्रीबृहद्भागवतामृत ग्रन्थमें वर्णित "भक्तिके तारतम्यसे भक्तोंके तारतम्य" का सुन्दर और मधुर रूपमें उपस्थापन, वार्षिक श्रीव्रजमण्डल-परिक्रमाके समयमें असाधारण रसमयी हरिकथाके माध्यमसे श्रीनारद मुनिके द्वारा श्रीकृष्णसे प्राप्त आशीर्वादके ऊपर उनका सुदृढ़ विश्वास कि जिस किसी प्रकारसे भी व्रजधूलिका स्पर्श करनेपर व्रजप्रेमकी अनायास प्राप्ति होना, व्रजके पारकीयभावकी विशेष महिमाका वर्णन, एवं श्रीजगन्नाथपुरीमें श्रीमन्महाप्रभुके भाव और लीलाकी तुलनामें श्रीनवद्वीपधाममें उनके भाव और लीलाकी विशेषता, इत्यादि। सौभाग्यवान जीव श्रील गुरुदेवके द्वारा जगत्में वितरित इन वैशिष्ट्योंके अनुशीलन द्वारा इनसे अनुप्राणित होकर श्रीमन्महाप्रभुकी अतुलनीय दयाका अनुभव कर सकते हैं।

श्रील गुरुदेवकी कृपासे उनके वाणी-वैशिष्ट्यरूपी समुद्रका मन्थन करके "श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता" नामक अमूल्य सम्पदरूपी प्रबन्धका अनुसन्धान प्राप्त हुआ है। यह प्रबन्ध जगत्-जीवों, विशेषकर गौरभक्तोंके लिए

श्रील गुरुदेवका अनुपम उपहार–स्वरूप है। अतः हम अत्यधिक श्रद्धा और यत्नके साथ इस उपहारको लघु–पुस्तिकाके रूपमें श्रीगौरभक्तोंके अनुशीलनके लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

हमारा पूर्ण विश्वास है कि व्रजभक्तिके साधकोंके साथ–ही–साथ परमार्थमें श्रद्धायुक्त पाठकोंके लिए भी यह पुस्तिका एक अमूल्य–सम्पदके रूपमें सुशोभित होगी। हम आशा करते हैं कि गौरभक्तवृन्द इस पुस्तिकामें वर्णित गूढ़ तत्त्वोंमें निमग्न होकर इसका अत्यधिक आस्वादन करेंगे, विशेषकर श्रीनवद्वीपधाम–परिक्रमाके समय श्रीगौर–जयन्तीके शुभ अवसरपर इस लघु–पुस्तिकाका अध्ययन एवं आस्वादन करनेपर हृदयमें श्रीगुरु एवं श्रीगौरहरिके प्रति कृतज्ञतासे ओत–प्रोत होकर वे स्वयंको सौभाग्यवान समझेंगे।

हम गङ्गाजलसे गङ्गा पूजा करनेकी भाँति दीन–हीन भावसे यह लघु–पुस्तिका अपने परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव—नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके श्रीकरकमलोंमें समर्पित करते हैं। श्रील गुरुदेव कृपापूर्वक अपनी निज वस्तुको स्वीकार करके हमारे द्वारा पूजित हों, हमारे प्रति प्रसन्न हों एवं नित्यधामसे अहैतुकी कृपा वर्षण करें, जिससे कि हम इस पुस्तिकामें वर्णित विशेष अप्राकृत–शिक्षाका पालन करनेके योग्य बन सकें।

इस पुस्तिकामें मुद्रणगत भूल-त्रुटियोंका रह जाना अस्वाभाविक नहीं है। श्रद्धालु पाठकोंके द्वारा इस पुस्तिकाका सार ग्रहण करनेपर हम स्वयंको कृतार्थ मानेंगे।

जय श्रील गुरुदेव!

जय शचीनन्दन श्रीगौरहरि!

श्रीराधाष्टमी
२३ सितम्बर, २०१२

श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-कृपालेश-प्रार्थी
प्रकाशन-मण्डली

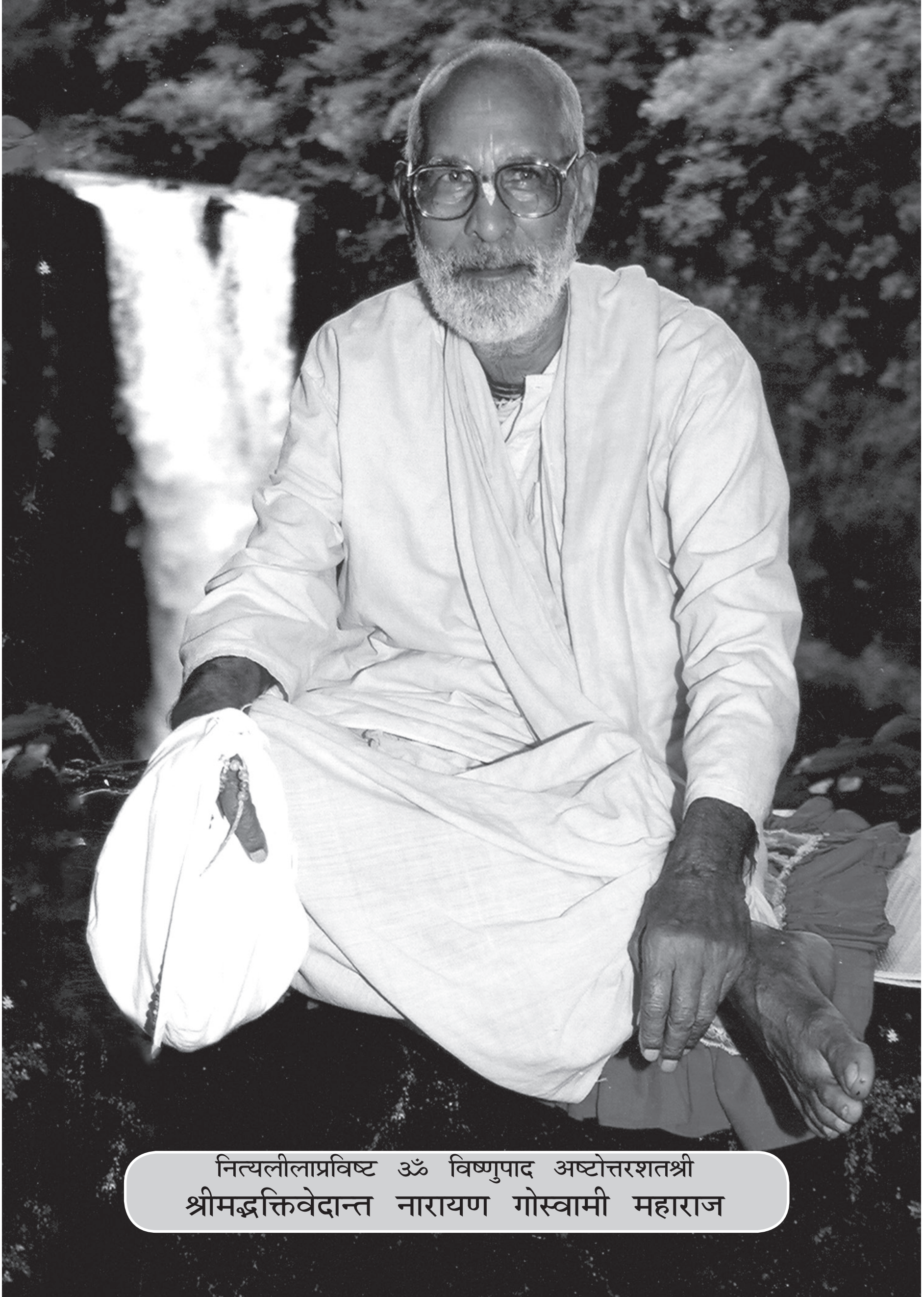

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

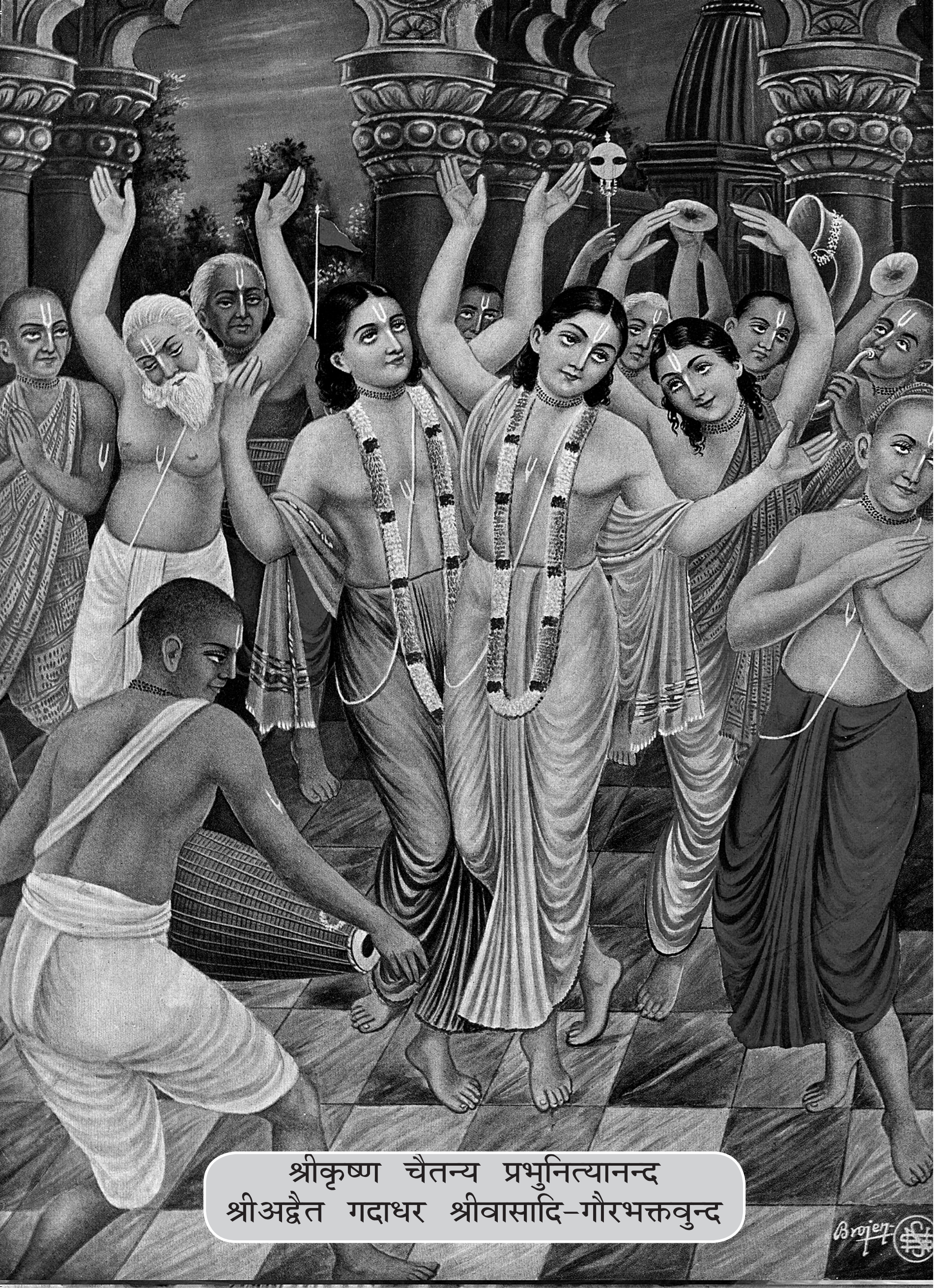

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभुनित्यानन्द
श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि–गौरभक्तवृन्द

श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता

मङ्गलाचरण

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेम-प्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्य नाम्ने गौरत्विषे नमः॥
(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य-लीला १९/५३)

अर्थात् महावदान्य (परम उदार), कृष्णप्रेम प्रदाता, कृष्णस्वरूप, कृष्णचैतन्य नामक गौराङ्गरूपधारी प्रभुको नमस्कार है। [इस श्लोकमें संक्षेपमें श्रीमन्महाप्रभुका नाम—श्रीकृष्णचैतन्य, उनका रूप—गौरवर्ण, उनका गुण—महावदान्यता (परम उदारता) एवं उनकी लीला—कृष्णप्रेमको प्रदान करना इत्यादिका वर्णन हुआ है।]

स्वयं-भगवान् एवं उनके अंश

व्रजेन्द्रनन्दन अर्थात् व्रजराज श्रीनन्द महाराजके पुत्र श्रीकृष्ण ही सच्चिदानन्दघन परब्रह्म स्वयं-भगवान् हैं। वे अनादिकालसे अनन्तरूपोंमें आत्मप्रकाश करके विराजित हैं। उन समस्त प्रकाशोंमेंसे वासुदेव, नारायण, राम, नृसिंह आदि उनके अंश हैं—यह श्रुति, स्मृति, पुराण-शिरोमणि श्रीमद्भागवत् आदि शास्त्रोंके द्वारा स्थापित सिद्धान्त है।

स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णका अन्य एक नित्य-स्वरूप

परब्रह्म, रसिकशेखर स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णका अन्य एक नित्यस्वरूप है। वह स्वरूप उनका अंश नहीं है, अपितु उनके उस स्वरूपमें भी स्वयं भगवत्ता नित्य-विराजित है। वह स्वरूप व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णके समान श्यामवर्णका नहीं होकर गौरवर्णका है। इसी कारण शास्त्रोंमें श्रीकृष्णके उस अन्य नित्य-स्वरूपको श्रीगौरहरिके नामसे वर्णित किया गया है।

श्रीमद्भागवतमें श्रीगौरहरिका प्रसङ्ग

श्रीमद्भागवतमें करभाजन ऋषिने कलियुगके आराध्य भगवत्-स्वरूप [श्रीगौरहरि] एवं उनकी आराधना-प्रणालीके सम्बन्धमें इस प्रकार वर्णन किया है—

कृष्णवर्णं त्विषाऽकृष्णं सङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः॥

(श्रीमद्भा॰ ११/५/३२)

अर्थात् हे राजन्! जो सदा सर्वदा 'कृष्ण'—इन दो वर्णोंका कीर्त्तन करते हैं, जिनकी अङ्गकान्ति अकृष्ण (घनश्याम नहीं) अर्थात् गौर है, जो अपने अङ्ग—श्रीनित्यानन्द प्रभु; उपाङ्ग—श्रीअद्वैताचार्य; अस्त्र—श्रीकृष्णनाम और पार्षद—श्रीगदाधर, श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीरायरामानन्द एवं श्रीवासादिके द्वारा घिरे हुए हैं, सुबुद्धिमान व्यक्ति सङ्कीर्त्तन-प्रधान यज्ञके द्वारा उन महापुरुषकी आराधना किया करते हैं।

उक्त श्लोककी टीकामें श्रील सनातन गोस्वामी, श्रील जीव गोस्वामी एवं श्रील विश्वनाथ चक्रवर्त्ती ठाकुर आदि

श्रीमद्भागवतके प्रमुख टीकाकारोंने विभिन्न शास्त्रीय प्रमाणों एवं अकाट्य युक्तियोंके सुदृढ़ आधारपर—'कृष्णवर्णं' पदका अर्थ—'कृष्ण' यह दो वर्ण, अथवा कृष्णके नाम–रूप–गुण–लीला–परिकरोंका कीर्त्तन करनेवालेके रूपमें किया है; तथा 'त्विषाऽकृष्णं' पदका अर्थ—गौर अथवा पीतकान्तिसे युक्त किया है।

मुण्डक–उपनिषदमें श्रीगौरहरिका प्रसङ्ग

मुण्डक–श्रुतिमें पीतवर्णधारी स्वयं–भगवान्‌का उल्लेख और भी स्पष्ट रूपमें वर्णित किया गया है—

यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्त्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति॥

(मुण्डकोपनिषद् ३/३)

अर्थात् जब कोई सौभाग्यवान व्यक्ति कर्त्ता, ईश्वर, ब्रह्मयोनि, पीतवर्णधारी पुरुषका दर्शन करता है, तब वह विवेकवान व्यक्ति विद्वान अर्थात् दिव्य–ज्ञान प्राप्तकर पाप–पुण्यसे सम्पूर्ण रूपसे निर्मल और प्रकृतिके सम्बन्धसे रहित होकर भगवान्‌के साथ परम साम्य–अवस्थाको अर्थात् उनके समान दिव्य रूपको प्राप्त करता है।

उपरोक्त श्लोकमें 'रुक्म' का अर्थ सुवर्ण (उज्ज्वल या पीतवर्ण) है; उक्त श्रुतिमन्त्रके कथनका तात्पर्य यह है कि वे रुक्मवर्ण—पीतवर्ण पुरुष कर्त्ता—समस्त कारणोंके कारण सर्वेश्वरेश्वर तथा ब्रह्मयोनि अर्थात् ब्रह्मकी भी प्रतिष्ठा हैं।

श्रीब्रह्माजीके द्वारा कथित *'ईश्वरः परमः कृष्ण ... सर्व कारण कारणं'* (ब्रह्मसंहता ५/१) अर्थात् 'श्रीकृष्ण ही परम

ईश्वर है ... समस्त कारणोंके कारण हैं' तथा स्वयं श्रीकृष्ण द्वारा कथित *'ब्रह्मणो प्रतिष्ठाऽहम्'* (गीता १४/२७) अर्थात् 'मैं ब्रह्मकी प्रतिष्ठा हूँ', इत्यादि स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णके लिए प्रयुक्त वचन उक्त श्लोकानुसार सम्पूर्ण रूपसे पीतवर्णधारी श्रीगौरहरिपर भी प्रयुक्त होते हैं। अतः ये पीतवर्ण पुरुष भी स्वयं-भगवान् हैं—यह सुस्पष्ट है।

मूल श्रुति-मन्त्रके 'साम्य' शब्दका अर्थ है—उनके समान गुणवान अथवा प्रतिभाशाली हो जाना, अर्थात् पीतवर्णधारी श्रीगौरहरिका दर्शन करके दर्शक उनके समान ही प्रेमवान हो जाता है एवं उसमें अन्योंको भी प्रेम दान करनेकी शक्ति सञ्चारित हो जाती है। यथा—

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी श्रीमन्महाप्रभुकी दक्षिण-यात्राके समय उनके आलिङ्गनको प्राप्त करनेवाले किसी एक सौभाग्यशाली व्यक्तिके विषयमें लिख रहे हैं—

जारे देखे ता'रे कहे,—कह कृष्णनाम।
एइमत वैष्णव कैल सब निज ग्राम॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य-लीला ७/१०१)

अर्थात् श्रीमन्महाप्रभुकी शक्तिसे सञ्चारित होनेवाले व्यक्तिने जिन्हें भी देखा उसने उन्हें श्रीकृष्णनाम ग्रहण करनेको कहा। इस प्रकार उस व्यक्तिने अपने समस्त ग्रामवासियोंको वैष्णव बना दिया।

स्वयं-भगवान् दो भिन्न व्यक्ति नहीं

स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण श्यामवर्ण एवं स्वयं-भगवान् श्रीगौरहरि पीतवर्णके हैं। अब सन्देह हो सकता है कि स्वयं-भगवान् क्या दो व्यक्ति हैं?

स्वयं-भगवान् कभी भी दो व्यक्ति नहीं हो सकते। *'एकमेव अद्वितीयम्'* (छान्दोग्योपनिषद् ६/२/१) [अर्थात् परब्रह्मके समान या उनसे श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है, परब्रह्म मात्र एक हैं।]—यह श्रुतियोंका सिद्धान्त है। अतएव स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण एवं स्वयं-भगवान् श्रीगौरहरि कदापि दो व्यक्ति नहीं बल्कि अभिन्न तत्त्व हैं।

एकमात्र स्वयं-भगवान् ही अन्यान्य भगवत्-स्वरूपोंको प्रकाशित करनेमें समर्थ

स्वयं-भगवान्के अतिरिक्त अन्यान्य भगवत्-स्वरूप जगत्में अवतीर्ण होकर आदिसे अन्त तक अपने उसी एक स्वरूपका ही दर्शन कराते हैं, किन्तु एकमात्र स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णने देवकी-वसुदेव और गोपियोंको चतुर्भुज मूर्त्तिमें, अर्जुनको विश्वरूपमें तथा द्वारकामें हनुमानको रामरूपमें दर्शन दिया था। स्वयं-भगवान् होनेके कारण श्रीकृष्णके लिए ऐसा कर पाना सम्भव है। किन्तु मीन, कूर्म, वराह, नृसिंह एवं श्रीरामादिने स्वयंसे भिन्न अन्य किसी भगवत्-स्वरूपका दर्शन नहीं कराया। पुनः श्रीचैतन्य महाप्रभुने ही जिस भक्तके जो इष्टदेव थे, उन भक्तोंको उसी (इष्ट) रूपमें सबके समक्ष ही दर्शन दिया था। श्रीवास पण्डित तथा श्रीनृसिंहानन्द ब्रह्मचारीको श्रीनृसिंह-रूपमें, श्रीमुरारिगुप्तको सपरिकर श्रीरामरूपमें, किसी अन्यको यज्ञ-वराह, चतुर्भुज, षड़्भुज, अष्टभुजरूपमें, किसीको मुरलीधारी कृष्णरूपमें एवं श्रीरायरामानन्दको श्रीराधाभावद्युति सुवलित रसराज महाभाव रूपमें दर्शन दिये थे। इससे स्वयं-भगवत्ताके साथ-ही-साथ

भगवान्‌के समस्त स्वरूपोंमें उनकी श्रेष्ठता भी प्रतिपादित होती है।

अतएव श्रीचैतन्यमहाप्रभु स्वयं-भगवान् हैं, यह श्रुति-स्मृति-पञ्चमवेद—महाभारत एवं प्रमाण-शिरोमणि श्रीमद् भागवतका सिद्धान्त है।

श्रीगौरहरिकी अद्भुत करुणाका विकास

कृष्ण अर्थात् श्यामवर्णके श्रीनन्दनन्दनकी अपेक्षा उपरोक्त पीतवर्णधारी शचीनन्दन श्रीगौरहरिकी करुणाका वैशिष्ट्य अधिक है।

भगवान्‌की करुणाके प्रभावसे ही उनका चिन्तन, स्मरण और अनुभव सम्भवपर

आनन्दकन्द करुणासिन्धु श्रीभगवान्‌की प्रत्येक लीलामें ही करुणा विद्यमान रहती है। प्रत्येक भगवत्-स्वरूप, प्रत्येक भगवत्-अवतार ही करुणामय होते हैं। करुणा भगवान्‌का स्वरूपधर्म है। भगवत्ताका सार माधुर्य है एवं माधुर्यका विकास एकमात्र करुणामें ही होता है। यदि भगवान्‌की करुणाका विकास नहीं होता, तो भगवान्‌के ऐश्वर्य-माधुर्य, उनकी दिव्य गुणावली, जीवोंके चित्तको आकर्षित करनेवाली उनकी लीलाओंका दृष्टिगोचर होना तो दूरकी बात, मन और बुद्धिके द्वारा उनका चिन्तन, स्मरण और अनुभव भी दुर्लभ और असम्भव हो जाता।

भगवत्-विमुख जीवोंको भगवत्-उन्मुख करानेमें ही करुणाका विकास

अगणित अनन्त सृष्टि भी भगवान्‌की करुणावर्षणका ही क्षेत्र है, तथा उसमें भी करुणाका मुख्य लक्ष्य है—जीव समुदाय। यद्यपि भगवत्-उन्मुख जीवोंको असीम ऐश्वर्य-माधुर्यमय लीला-रसामृतके सिन्धुमें निमग्न करानेमें ही करुणाका असमोर्द्ध विकास होता है, तथापि भगवत्-विमुख जीवोंको यथासम्भव कौशलके द्वारा अपने (सच्चिदानन्द श्रीभगवान्‌के) प्रति उन्मुख करानेमें उस करुणाके विकास एवं भगवद्भक्त-विरोधी दुष्कृत दैत्य-दानवोंका विनाश करके उन्हें मुक्ति आदि प्रदान करनेमें भी भगवत्-करुणाके विचित्र विकासको लक्ष्य किया जा सकता है।

प्रपञ्चमें समस्त भगवत्-अवतारोंके अवतरणका मूलकारण

भगवान् श्रीकृष्णने श्रीगीतामें कहा है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

(गीता ४/७-८)

अर्थात् हे भारत! जब-जब धर्मकी हानि और अधर्मकी वृद्धि होती है, तब-तब मैं अपनी नित्यसिद्ध देहको प्रकट करता हूँ। मैं अपने एकान्तिक भक्तोंके परित्राण, दुष्टोंके

विनाश एवं धर्मकी संस्थापनाके लिए युग-युगमें आविर्भूत होता हूँ।

श्रीशुकदेव गोस्वामीने भी कहा है—

यदा यदेह धर्मस्य क्षयो वृद्धिश्च पाप्मनः।
तदा तु भगवानीश आत्मानं सृजते हरि॥

(श्रीमद्भा॰ ९/२४/५६)

अर्थात् जब-जब संसारमें धर्मका ह्रास एवं पापकी वृद्धि होती है, तब-तब सर्वशक्तिमान श्रीहरि अवतार ग्रहण करते हैं।

श्रीगौरहरिके आविर्भूत होनेका कारण अन्यान्य भगवत्-अवतारोंके आविर्भूत होनेके कारणसे विलक्षण

हम अन्यान्य भगवत्-अवतारोंके आविर्भूत होनेके कारणके सम्बन्धमें विचार करनेपर इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि साधुजनोंकी रक्षा, असुरोंका विनाश एवं अधर्मका विनाश करके धर्मकी संस्थापना करना ही समस्त भगवत्-स्वरूपोंके अवतारका कारण है। किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभुके आविर्भावके मूलमें जिन तीन विशेष कारणोंका उल्लेख देखा जाता है, अन्य किसी अवतारके आविर्भावमें इन तीन कारणोंमेंसे एकका भी उल्लेख लक्षित नहीं होता है।

श्रीगौरहरिके अवतरणके तीन अपूर्व उद्देश्य

प्रथमतः—श्रीगौरहरि अपनी करुणाके वशीभूत होकर अवतीर्ण हुए थे। **द्वितीयतः**—श्रीगौरहरि परमोज्ज्वल रसमयी

स्वभक्तिकी श्री (सम्पत्ति) को दान करनेके लिए अवतरित हुए थे। **तृतीयतः**—श्रीगौरहरि अपने असमोर्द्ध [अर्थात् जिनके समान और जिनसे श्रेष्ठ कोई न हो, उन] विविध माधुर्योंको श्रीमती राधिकाके समान स्वयं आस्वादन करनेके लोभसे श्रीमती राधाजीके भाव और उनकी कान्तिसे युक्त होकर आविर्भूत हुए थे।

श्रीलरूप गोस्वामीने श्रीशचीनन्दन गौरहरिके आविर्भावकी पृष्ठभूमिपर प्रथमोक्त दो कारणोंका उल्लेख इस प्रकार किया है—

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्ण कलौ
समर्पयितुमुन्नतोज्जवल-रसां स्वभक्तिश्रियम्।
हरिः पुरट-सुन्दरद्युतिः कदम्बसन्दीपितः
सदा हृदय-कन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः॥

(विदग्धमाधव प्रथम अङ्क द्वितीय श्लोक)

अर्थात् जो सर्वोत्कृष्ट उन्नत-उज्जवल-रस चिरकाल तक जगत्को दान नहीं किया गया, उसी परमोज्जवल-रसमयी स्वभक्तिकी श्री (सम्पत्ति या शोभा) को दान करनेके लिए जो परमकरुणावश कलिकालमें अवतीर्ण हुए हैं, उज्जवल-कान्तिके द्वारा देदीप्यमान वे शचीनन्दन श्रीगौरहरि तुम्हारे हृदयमें स्फुरित हों।

श्रीगौरहरिके आविर्भावके उपरोक्त तृतीय कारणके सम्बन्धमें श्रील स्वरूप दोमादर गोस्वामीने उल्लेख किया है—

श्रीराधायाः प्रणयमहिमा कीदृशो वानयैवा-
स्वाद्यो येनाद्भुत-मधुरिमा कीदृशो वा मदीयः।

सौख्यञ्चास्या मदनुभवतः कीदृशं वेति लोभात्
तद्भावाढ्यः समजनि शचीगर्भसिन्धौ हरीन्दुः॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला १/६)

अर्थात् श्रीराधाके प्रणयकी महिमा कैसी है? मेरी अद्भुत मधुरिमा, जिसका आस्वादन श्रीराधा करती हैं, कैसी है? मेरी मधुरिमाकी अनुभूतिसे श्रीराधाको किस सुखकी प्राप्ति होती है?—इन तीन विषयोंमें लोभ उत्पन्न होनेपर श्रीकृष्णरूपी चन्द्रने शचीगर्भरूपी समुद्रसे श्रीगौरहरिके रूपमें जन्म ग्रहण किया।

श्रीगौर-आविर्भावके कारणोंमें ही 'करुणा' शब्दका स्पष्ट उल्लेख

यद्यपि समस्त भगवत्-अवतारोंके आविर्भावके मूल कारण—साधुजनोंकी रक्षा, असुरोंका विनाश और धर्मकी स्थापना इत्यादि—जीवोंके प्रति भगवान्‌की करुणाके ही परिचायक हैं, तथापि श्रीगौर-आविर्भावके अतिरिक्त अन्य किसी भगवत्-अवतारके आविर्भावके कारणोंमें 'करुणा' शब्दका स्पष्ट उल्लेख नहीं पाया जाता। अतएव अन्यान्य अवतारोंकी करुणाकी तुलनामें श्रीगौरावतारकी करुणामें एक अपूर्व विशेषता है।

श्रीगौरहरिकी करुणाकी अभूतपूर्व विशेषता

(१) एकमात्र श्रीगौरहरि द्वारा ही सभीको भक्ति प्रदान

पहले कहा गया है कि साधुजनोंकी रक्षा और असाधुजनोंका विनाश करके धर्मकी संस्थापना करनेके

लिए श्रीभगवान्‌ने असंख्य अवतार ग्रहण किये हैं। उनमेंसे वेदादि-शास्त्र एवं उनके सारभूत श्रीमद्भागवतके अनुसार अपार एवं अगाध समुद्र भी जिन प्रतिभाशाली मीन, कच्छप, वराह आदिके एक रोमको भी सर्वथा स्नान नहीं करा सके—ऐसे अवतारोंके द्वारा भक्ति दान करनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता। श्रीनृसिंह, वामन, परशुराम आदि अवतार क्रमशः अपने अवतरणके मुख्य प्रयोजन तक ही सीमित रहे। कपिल, दत्तात्रेय आदि अवतार भी सांख्य, योगादिके उपदेष्टा ही रहे। अन्यान्य बुद्धादि अवतारोंमें भी भक्ति-दान करनेका कोई प्रसङ्ग नहीं पाया जाता। केवलमात्र श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रने ही जीवोंको आकृष्ट किया है; किन्तु भक्ति-दानके विषयमें उन्होंने निजजनोंके प्रति भी उदारताका विशेष परिचय नहीं दिया।

राजन् पतिर्गुरुरलं भवतां यदुनां,
दैवं प्रियः कुलपतिः क्व च किङ्करो वः।
अस्त्वेवमङ्ग भगवान् भजतां मुकुन्दो,
मुक्तिं ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोगम्॥

(श्रीमद्भा॰ ५/६/१८)

[श्रील शुकदेव गोस्वामी श्रीपरीक्षित महाराजसे कह रहे हैं—] हे राजन्! यह सत्य है कि भगवान् मुकुन्द आपके एवं यादवोंके पति, गुरु, उपास्य, प्रिय, स्वामी एवं कभी-कभी सेवक भी हुए हैं, तथापि वही भगवान् श्रीकृष्ण

अपने भजन करनेवालोंको मुक्ति सहज रूपमें दे देते हैं, किन्तु भक्ति सहज रूपमें नहीं देते।

कृष्ण यदि छुटे भक्ते भुक्ति-मुक्ति दिया।
कभु प्रेमभक्ति ना देन राखेन लुकाइया॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला ८/१८)

अर्थात् भक्त यदि भुक्ति या मुक्तिकी आशा करते हैं, तो श्रीकृष्ण उन्हें इन दोनोंको देकर तुरन्त अपना पीछा छुड़ा लेते हैं। किन्तु प्रेमभक्तिको वे सहज ही न देकर उसे छिपाकर रखते हैं।

इस प्रकार 'कर्त्तुमकर्त्तुमन्यथाकर्त्तुम् प्रभु' अर्थात् असम्भवको सम्भव करने, सम्भवको असम्भव करने तथा अन्यथा करनेमें समर्थ भगवान् अपने सभी स्वरूपोंमें अपना भजन करनेवाले व्यक्तिके निकट भी प्रेमभक्तिको गोपन करके रखते हैं।

दूसरी ओर, श्रीगौराङ्ग-स्वरूपमें अपने उपदेश, स्पर्श, दृष्टि एवं प्रेरणा आदिके द्वारा सभी जीवोंको भक्तिरसमें निमग्न करनेके लिए ही भगवान्ने सन्यास ग्रहण किया एवं श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें सर्वत्र भ्रमण करके, अपने परिकरोंको यत्र-तत्र भेजकर, श्रीविग्रह और भक्तिग्रन्थोंको प्रकाशित करवाकर उन्होंने हरिनाम-प्रेमको दोनों हाथोंसे वितरण किया। यह उनकी विशेष करुणा ही है।

(२) श्रीगौरहरि योग्यता विचार किये बिना प्रेम प्रदान करनेवाले

श्रील रूप गोस्वामीने कहा है—

सन्त्ववतारा बहवः पङ्कजनाभस्य सर्वतोभद्राः।
कृष्णादन्यः को वा लतास्वपि प्रेमदो भवति॥
(लघुभागवतामृतम् पूर्वखण्ड ३०३)

अर्थात् भगवान् पङ्कजनाभके अनेक मङ्गलमय अवतार क्यों न हों, किन्तु श्रीकृष्णके अतिरिक्त लता अर्थात् आश्रितजनोंको प्रेमदान करनेवाला और कौन है?

यद्यपि उपरोक्त वचन सत्य है, किन्तु *'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'* (गीता ४/११) [अर्थात् हे पार्थ! जो मनुष्य जिस प्रकार मेरा भजन करते हैं, मैं भी उनका उसी प्रकार भजन करता हूँ।] गीताकी इस उक्तिके अनुसार श्रीकृष्ण श्रद्धा एवं अधिकारको तराजुमें तोल करके ही भक्ति प्रदान करते हैं। जिनकी जितनी शरणागति अथवा श्रद्धा है, उन्हें उसी परिमाणमें ही भक्ति देते हैं। कम भी नहीं देते और अधिक भी नहीं, ठीकसे तोलकर ही भक्तिका दान करते हैं।

कृष्णनाम भी परम उदार और दयालु हैं एवं उन्होंने भूत, भविष्य और वर्त्तमानमें सङ्केत, परिहास, स्तोभ एवं हेलाके द्वारा नामाभास करनेवालोंका उद्धार किया है, कर रहे हैं और करेंगे, यह भी सत्य है।

परन्तु—

कृष्णनाम करे अपराधेर विचार।
'कृष्ण' बलिले अपराधीर ना हय विकार॥
(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला ८/२४)

अर्थात् 'कृष्णनाम' अपराधका विचार किया करते हैं। 'कृष्ण' उच्चारण करनेपर भी अपराधीके हृदयमें विकार नहीं होता।

किन्तु—

चैतन्य-नित्यानन्दे नाहि ए-सब विचार।
नाम लैते प्रेम देन, बहे अश्रुधार॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि-लीला ८/३१)

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने कहा है कि श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभुके नामोंमें कृष्ण-नामकी भाँति अपराधका कोई विचार नहीं है। उनके नाम लेनेके साथ-साथ उनका नाम प्रेमको प्रदान करता है और नाम उच्चारण करनेवाले व्यक्तिके नेत्रोंसे बाह्य लक्षण स्वरूप निरन्तर अश्रुधारा प्रवाहित होती है।

केवल इतना ही नहीं—

एमन कृपालु नाहि शुनि त्रिभुवने।
कृष्णप्रेमा हय जाँर दूर दरशने॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य-लीला १६/१२१)

अर्थात् जिन (श्रीमन्महाप्रभु) के दूरसे दर्शन करनेपर ही देखनेवालोंमें कृष्णप्रेम आविर्भूत हो जाता है, मैंने तीनों लोकोंमें ऐसे कृपालुजनके विषयमें कभी नहीं सुना है।

श्रीमन्महाप्रभुकी करुणाने पात्रापात्रका विचार न करके पात्रको तो प्रेमदान किया ही, जिनके पास पात्र नहीं था, जो खाली हाथ आये थे, उन्हें भी स्वयं पात्र प्रदान करके उनके पात्रको प्रेमामृतसे भर दिया।

(३) श्रीगौरहरिका अपनी करुणाशक्तिके प्रति आत्मसमर्पण

जो उन्नतोज्जवल स्वभक्तिरूप प्रेमामृत श्रीनारद आदि भगवान्‌के प्रियजनोंके लिए भी सुदुर्लभ है—*'यत् प्रेष्ठैरप्यलमसुलभं किं पुनर्भक्तिभाजाम्'* (उपदेशामृतम् ११) अर्थात् जो गोपीप्रेम श्रीनारद जैसे भगवान्‌के अति प्रिय भक्तोंके लिए भी अत्यन्त दुर्लभ है, तब फिर साधकभक्तोंकी तो बात ही क्या है? किन्तु श्रीगौरकरुणाने अबाधगति अर्थात् बिना किसी रोक-टोकके अपनी स्वतन्त्रताके द्वारा प्रसारित होकर प्रबल बाढ़के समान समस्त जगत्‌को उसी दुर्लभ [श्रीकृष्णके प्रतिगोपियोंके] प्रेमामृतमें निमग्न कर दिया। श्रीगौरहरिने अपनी असमोर्द्ध करुणा शक्तिको मुक्त करते हुए उससे कह दिया—"करुणा! मैंने तुम्हारे निकट आत्मसमर्पण कर दिया है। तुम जिस दिशामें जितनी दूर जाना चाहती हो, जाओ और वहाँ जाकर अपराधी, विमुख, तटस्थ, श्रद्धालु, अश्रद्धालु, साधारण भक्त और विशेष भक्त सभीको प्रेमकी बाढ़में डुबो दो।"

इस प्रेमकी बाढ़में सर्वप्रथम कुलियाके पहाड़ [नवद्वीपके निन्दुक विद्यार्थीवर्ग], नीलाचलकी घाटी [सार्वभौम भट्टाचार्य आदि अद्वैतवादिगण] एवं अन्तमें काशीके पर्वतोंके उच्च शिखर [अपराधी अद्वैतवादी प्रकाशानन्द सरस्वती एवं उसके साठ हजार सन्यासी शिष्य] अतलके तलमें धस गये। श्रीगौरकरुणाका ऐसा अपूर्व माधुर्य, अद्भुत उल्लास, अनुपम

औदार्य एवं असमोर्द्ध वैशिष्ट्य प्रेम-प्रदाता लीला-पुरुषोत्तम श्रीकृष्णमें भी दृष्टिगोचर नहीं होता।

(४) श्रीगौरहरिकी करुणाका पूर्ण रूपसे प्रस्फुटित होना

अन्यान्य अवतारोंमें भगवान्‌ने साधुओंका परित्राण किया है एवं साधुजनोंने भी भगवान्‌की इस करुणाका प्रत्यक्ष रूपमें अनुभव किया है। धर्मकी संस्थापना करके भगवान्‌ने धर्मप्राण सज्जनोंका उपकार किया है तथा उन उपकृत सज्जनोंने भी उस करुणाका अनुभव किया है। अन्यान्य अवतारोंमें भगवान्‌ने असुरोंका विनाश करके उन्हें सद्‌गति प्रदान की है, क्योंकि वे 'हतारिगतिदायक' (अपने द्वारा मारे जानेवालेको उत्तमगति प्रदान करनेवाले) हैं। श्रीकृष्णने जिन समस्त असुरोंका वध किया, उन सबको मुक्ति प्रदान की। यहाँ तक कि अपने भक्त अर्जुन और भीमके द्वारा मारे गये व्यक्तियोंको भी उन्होंने मुक्ति प्रदान की है। यह असुरोंके प्रति भगवान्‌की करुणाका एक विचित्र प्रदर्शन है। पूतनाको उन्होंने धात्री-उचित गति प्रदान की। किन्तु इन असुरोंने भगवान्‌की ऐसी करुणाका कब अनुभव किया? मृत्युके पश्चात् भगवान्‌के चरणोंमें स्थान प्राप्त करनेके बाद। जब तक वे जीवित थे, तब तक वे भगवान्‌की करुणाका अनुभव नहीं कर पाये। उनके बन्धु-बान्धव-पुत्र-पत्नी आदि कोई भी (केवल कालीयनाग और उसकी पत्नियोंको छोड़कर) उस करुणाका अनुभव नहीं कर पाये। अन्तिम निःश्वास परित्याग करने तक उन असुरोंकी यह निश्चित

धारणा थी कि श्रीकृष्णने उनके साथ निष्ठुर व्यवहार किया है। अतएव अन्यान्य अवतारोंमें करुणाके माधुर्यका विकास असम्पूर्ण रहा है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुने किन्तु किसी प्रकारका अस्त्र-शस्त्र धारण नहीं किया, किसीके प्राणोंका भी विनाश नहीं किया, अपितु सभीको हरिनाम प्रदान करके उनका चित्त शुद्ध कर दिया। असुर संहार नहीं—असुरत्व (आसुरिक वृत्तिके) संहारकी विशेषता केवलमात्र श्रीगौरावतारमें ही परिलक्षित होती है। *'राम आदि अवतारे, क्रोधे नाना अस्त्र धरे। एबे अस्त्र ना धरिल, प्राणे कारो ना मारिल, चित्तशुद्ध करिल सबार॥'* अर्थात् रामादि अवतारोंमें भगवान्‌ने क्रोधपूर्वक विभिन्न अस्त्र धारणकर असुरोंका संहार किया। किन्तु अब इस श्रीचैतन्य-अवतारमें भगवान्‌ने कोई अस्त्र धारण नहीं किया और न ही किसीके प्राणोंका हरण किया, बल्कि सबके चित्तको शुद्ध कर दिया। इसका उदाहरण जगाई-माधाई, चाँद काज़ी, नवद्वीपके निन्दुक विद्यार्थीगण, काशीवासी निर्विशेषवादी प्रकाशानन्द सरस्वती और उसके शिष्यवर्ग इत्यादि हैं। ये सभी विष्णु-वैष्णव विरोधी, महा-महा अपराधी होनेपर भी श्रीचैतन्य महाप्रभुकी करुणासे परमभागवत होकर स्त्री, पुत्र, परिवार और शिष्य-प्रशिष्यों सहित अपने जीवितकालमें ही श्रीगौरहरिकी असमोर्द्ध करुणाके माधुर्यका अनुभव और आस्वादनकर कृतकृतार्थ हुए थे।

(५) जीवोंके उद्धारके लिए श्रीगौरहरिकी विशेष व्याकुलता

एक समय श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रील हरिदास ठाकुरसे पूछा—जीवोंका उद्धार किस प्रकार होगा? पशु-पक्षी, तृण-लता-गुल्मादि और स्थावर जीवोंका निस्तार कैसे होगा? इसके उत्तरमें श्रील हरिदास ठाकुरने श्रीमन्महाप्रभुसे कहा कि आपने जिस उच्च-हरिनाम-सङ्कीर्त्तनका प्रचार किया है, उसीसे चल-अचल आदि समस्त प्राणियोंका उद्धार होगा। नाम-ध्वनिसे संयुक्त वायुके स्पर्शमात्रसे ही सभी जीवोंका निस्तार अवश्यम्भावी है।

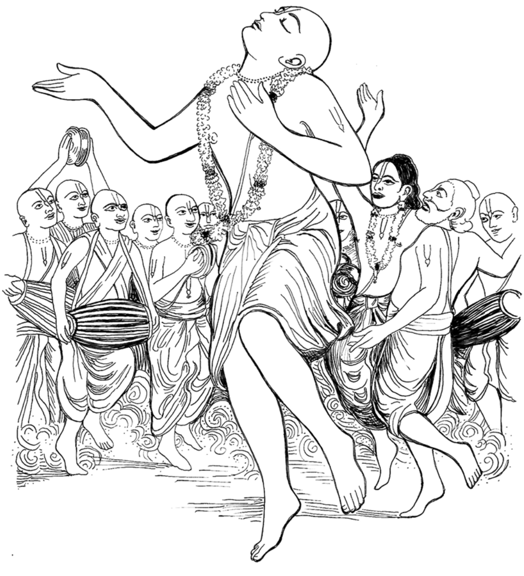

वस्तुतः उच्च श्रीनाम–सङ्कीर्त्तनके प्रचलनके द्वारा करुणाका असमोर्द्ध्व विकास जिस प्रकार श्रीगौरावतारमें हुआ है एवं श्रीगौरलीलामें जीव निस्तारकी जैसी उत्कण्ठामयी भावना निहित है, वह अन्यत्र कहीं नहीं देखी जाती। अन्य किसी भगवत्–स्वरूपने स्वयं भक्तिके आचार–प्रचारकी शिक्षा जीवोंको प्रदान नहीं की।

(६) श्रीगौरहरि—रसिकशेखर और परमकरुण

श्रीचैतन्यचरितामृत (आदि–लीला ४/१६) में वर्णन है—*'रसिकशेखर कृष्ण परम करुण'* अर्थात् रसिकशेखर श्रीकृष्ण परम करुण हैं। किन्तु विचार करनेपर देखा जाता है कि कृष्ण रसिक एवं करुण हैं, यह सत्य है, किन्तु वे तब तक रसिकशेखर एवं परम करुण नहीं है, जब तक वे राधाभाव एवं उनकी कान्तिको अङ्गीकार करके श्रीगौरहरिके रूपमें अवतीर्ण नहीं हुए। इसका कारण है कि श्रीकृष्णलीलामें उनकी तीन वाञ्छाएँ अपूर्ण रह गयी थीं, जिनका आस्वादन उन्होंने अपनी श्रीगौरलीलामें किया और तभी वे यथार्थ रूपसे रसिकशेखर हुए। श्रीकृष्णने गोपियोंका माखन एवं मन आदि चोरी किया था, किन्तु श्रीकृष्णलीलामें वे श्रीमती राधिकाकी अङ्गकान्ति एवं उनके स्वरूपगत अधिरूढ़ मादन, मोदन एवं मोहन भावोंकी चोरी नहीं कर पाये थे। इसकी सूचना हमें श्रील रायरामानन्दके वचनोंसे मिलती है, जिसमें उन्होंने कहा है—*'राधाभावद्युति सुवलितं नौमि कृष्ण स्वरूपम्'* (श्रीचैतन्य–चरितामृत आदि–लीला १/५) अर्थात् श्रीमती राधाजीके भाव

और कान्तिसे सुवलित श्रीकृष्णस्वरूप श्रीचैतन्य महाप्रभुको मैं नमन करता हूँ।

श्रीकृष्ण असुरोंको मुक्ति प्रदान करके पृथ्वीका भार हरण करनेके कारण 'करुण' हैं, किन्तु श्रीगौरहरि अपराधियोंको भी ब्रह्मादिके लिए भी सुदुर्लभ [गोपी] प्रेमको मुक्तहस्तसे वितरणकर 'परमकरुण' के रूपमें विख्यात हुए हैं।

(७) श्रीगौरकरुणाकी चमत्कारिक विशेषता

श्रीगौरहरिकी करुणाकी एक और विशेषताको श्रील नरोत्तम दास ठाकुरने स्वरचित प्रार्थनामें वर्णन किया है—

जे गौराङ्गेर नाम लय, ता'र हय प्रेमोदय,
ता'रे मुञि जाइ बलिहारि।
गौराङ्गेर सङ्गीगणे, नित्यसिद्ध करि' माने,
से जाय व्रजेन्द्रसुत-पाश।
श्रीगौड़मण्डल-भूमि, जेबा जाने चिन्तामणि,
ता'र हय व्रजभूमे वास॥
गौर-प्रेम रसार्णवे, से तरङ्गे जेबा डुबे,
से राधा-माधव अन्तरङ्ग।

(श्रील नरोत्तम दास ठाकुर, प्रार्थना ३९)

अर्थात् जो श्रीगौराङ्ग महाप्रभुका नाम उच्चारण करते हैं, उनके हृदयमें कृष्णप्रेम उदित हो जाता है, मैं ऐसे प्रेमीजनोंके बलिहारी जाता हूँ। जो श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके परिकरोंको नित्यसिद्ध मानते हैं, वे सपरिकर व्रजेन्द्रनन्दनको प्राप्त करते हैं। जो गौड़मण्डल-भूमिको अप्राकृत चिन्तामणि-स्वरूप मानते हैं, उनका ही वास्तवमें व्रजभूमिमें नित्य वास

होता है एवं जो गौर-प्रेमरूपी रस-सिन्धुकी तरङ्गोंमें डूबते हैं, वे ही राधामाधवके अन्तरङ्ग हो पाते हैं।

श्रील भक्तिविनोद ठाकुरने भी श्रीगौरनामकी करुणा एवं विशेषताके सम्बन्धमें कहा है—

गौड़-व्रज-जने, भेद ना देखिब
हइब बरज वासी।
धामेर स्वरूप, स्फुरिबे नयने
हइब राधार दासी॥

अर्थात् यदि मैं गौड़मण्डलवासियों और व्रजवासियोंमें भेद नहीं देखूँगा, तभी मैं यथार्थ रूपमें व्रजवासी हो पाऊँगा, तभी धामका स्वरूप मेरे नेत्रोंके समक्ष स्फुरित होगा और मैं श्रीमती राधारानीकी दासी हो पाऊँगा।

कितनी अद्भुत बात है! डूबे हिन्द-महासागरमें और निकले प्रशान्त महासागरसे। डूबे गौरप्रेमरूपी-सागरमें और निकले राधा-कृष्णरूपी प्रेमसागरसे। आश्रय किया गौर-परिकरोंका और दासी हो गये श्रीमती राधिकाकी। यह श्रीगौरलीलाकी एक अद्भुत विशेषता है।

परकीया-भाव—श्रीचैतन्य महाप्रभुका परमदिव्य दान

साध्य-साधन अथवा उपासनाके क्षेत्रमें भी श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता और भी अधिक चमत्कृत कर देनेवाली एवं अतुलनीय है।

परकीया-भावका इङ्गित श्रीकृष्णकर्णामृत, श्रीमद्भागवतके श्रीरासपञ्चाध्याय, मुक्ताफल, श्रीचण्डीदास और विद्यापतिकी पदावलियोंमें स्पष्ट रूपसे होनेपर भी श्रीचैतन्य महाप्रभुसे पहले किसी भी वैष्णवाचार्यने साध्य-साधनके विषयमें परकीया-भावका उपदेश स्पष्ट रूपसे नहीं दिया। श्रीमन् महाप्रभुके एकान्त अनुगत एवं उनके मनोऽभीष्टको पूर्ण करनेवाले श्रील सनातन गोस्वामी, श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रीचैतन्यचरितामृतके रचयिता श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी आदिने क्रमशः स्वरचित श्रीबृहदभागवतामृत, श्रीउज्ज्वलनीलमणि तथा श्रीचैतन्यचरितामृत आदि प्रामाणिक ग्रन्थोंमें परकीया-भावको ही साध्य-साधनके विषयमें चरम सिद्धान्तके रूपमें स्थापित किया है।

श्रीचैतन्यचरितामृत (आदि-लीला ४/४७-४९) में इस प्रकार कहा गया है—

परकीय-भावे अति रसेर उल्लास।
व्रज बिना इहार अन्यत्र नाहि वास॥

व्रजवधूगणेर एइ भाव निरवधि।
तार मध्ये श्रीराधार भावेर अवधि॥

प्रौढ़निर्मलभाव प्रेम सर्वोत्तम।
कृष्णोर माधुर्यरस आस्वादन कारण॥

अर्थात् परकीया-भावमें रसका अत्यन्त उल्लास होता है तथा व्रजके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी परकीया-भावकी स्थिति नहीं है। व्रजवधुओंमें यह परकीया-भाव निरन्तर विद्यमान रहता है और उनमेंसे भी श्रीराधाजीमें तो इसकी चरमसीमा विराजित है। श्रीमती राधिकाका परिपक्व निर्मल परकीया-भाव ही सर्वोत्तम प्रेम है और श्रीमती राधाका यही परकीया-भावयुक्त प्रेम ही श्रीकृष्णके माधुर्यरसके आस्वादनका कारण है।

पदकर्त्ता श्रीप्रेमानन्दने भी उल्लासमें भरकर गान किया है—

एमन शचीर नन्दन बिने।
'प्रेम' बलि नाम, अति अद्भुत,
श्रुत हइत का'र काने?

अहो! ऐसे शचीनन्दन श्रीगौरहरिकी करुणाके बिना अति अद्भुत 'प्रेम' नामक शब्द कौन सुन पाता?

श्रीकृष्ण नामेर, स्वगुण महिमा,
केबा जानाइत आर?
वृन्दा विपिनेर महा मधुरिमा,
प्रवेश हइत का'र?

श्रीगौरहरिके अतिरिक्त अन्य कौन हमें श्रीकृष्णनामकी अद्भुत गुण-महिमा बतलाता? यदि राधाभाव सुवलित

श्रीकृष्णस्वरूप शचीनन्दन श्रीगौरहरि इस जगत्में प्रकट होकर श्रीवृन्दावनकी महा–मधुरिमाका प्रकाश नहीं करते [पात्र एवं अपात्रका विचार किये बिना कलियुगी जीवोंके प्रति परम करुणावशतः उन्हें व्रजकी माधुरीमें प्रवेशका सौभाग्य प्रदान नहीं करते] तो श्रीवृन्दावनकी महा–मधुरिमामें किसका प्रवेश हो पाता?

केवा जानाइत, राधार माधुर्य,
रस–यश चमत्कार?
ता'र अनुभाव, सात्त्विक विकार,
गोचर छिल वा का'र?

कौन श्रीमती राधिकाके माधुर्य, उनके रसकी महिमा एवं उसकी चमत्कारिताके विषयमें बतलाता? अर्थात् श्रीमती राधिकाके चमत्कारपूर्ण महाभावकी अधिरूढ़, मोदन, मादन आदि अलौकिक स्थितियोंको इस धराधाममें शचीनन्दन श्रीगौरहरिके बिना अन्य कौन प्रकाशित करता? शचीनन्दन श्रीगौरहरिकी करुणाके बिना श्रीमती राधिकाके अनुभाव और सात्त्विक विकार आदि किसके दृष्टिगोचर थे?

व्रजे जे विलास, रास महारास,
प्रेम परकीय तत्त्व।
गोपीर महिमा, व्यभिचारि सीमा,
का'र अवगति छिल एत?

श्रीगौरहरिकी करुणाके बिना मधुर वृन्दावनमें अखिलरसामृत मूर्त्ति श्रीकृष्ण द्वारा महाभावकी मूर्त्तिमान विग्रह श्रीमती राधिका

और उनकी कायव्यूहस्वरूप गोपियोंके साथ प्रकाशित व्रजके अप्राकृत विलास, रास–महारास तथा परकीय–प्रेमके तत्त्वको जानना किसके लिए सम्भव था? श्रीगौरहरिकी करुणाके बिना गोपियोंकी महिमा तथा उनके प्रेमकी व्यभिचारी सीमाके विषयमें कौन जानता था?

धन्य कलि धन्य, निताई–चैतन्य,
परम करुणा करि'।
विधि अगोचर, जे प्रेम–विकार,
प्रकाशे जगत् भरि॥

अहो, यह कलियुग अतिधन्य है, क्योंकि इसमें श्रीनित्यानन्द प्रभु एवं श्रीचैतन्य महाप्रभुने परम करुणापूर्वक अवतरित होकर उस प्रेम–विकारको सम्पूर्ण जगत्‌में प्रकाशित किया, जो प्रेम ब्रह्माजीके लिए भी अगोचर है।

उत्तम अधम, किछु ना बाछिल,
याचिया दिलेक कोल।
कहे प्रेमानन्दे, एमन–गौराङ्गे,
अन्तरे धरिया दोल॥

उत्तम अथवा अधम किसी भी प्रकारके भेदभावके बिना शचीनन्दन श्रीगौरहरिने स्वयं सबको अपने हृदयसे लगाकर अङ्गीकार किया एवं उन्हें उस प्रेमको दिया। पदकर्त्ता श्रीप्रेमानन्द कहते हैं—अरे भाइयो! ऐसे श्रीगौराङ्ग महाप्रभुको अपने हृदयमें धारणकर विचरण करो।

इस प्रकार अपने स्वरूपके प्रकाशमें, पतित–पावनताके विषयमें, आत्मदान अर्थात् स्वभक्तिश्रीके दानके विषयमें, भावी जीवोंका उद्धार करनेमें, जीवोंके स्वरूपगत परमधर्म (सेवावृत्ति) अथवा अकैतव–धर्मके प्रचारमें, कृष्णप्रेमकी पूर्णतम सीमातक स्वरूपके प्रकाशमें, नाम–प्रेम वितरणमें एवं सर्वोपरि श्रीकृष्णके अनुपम माधुर्यके रसास्वादनमें श्रीगौर–करुणाके महामाधुर्यमय और उल्लासमय विकासकी जो विशेषता है, वह सर्वथा अनिर्वचनीय और अतुलनीय है। ऐसी करुणा किसी युगमें अथवा किसी भगवत्–स्वरूपमें अभिव्यक्त नहीं हुई है। अतएव, हम सब गौरपरिकर श्रील प्रबोधानन्द सरस्वतीकी वाणीका अनुसरण करनेकी चेष्टा करें—

हे साधव! सकलमेव विहाय दूरात चैतन्यचन्द्र चरणे कुरुतानुरागम्। (श्रीचैतन्यचन्द्रामृतम् १२०) अर्थात् हे साधुजनो! सब कुछ दूरसे परित्याग करके श्रीचैतन्यचन्द्रके चरणोंमें अनुराग उत्पन्न करें।

श्रीचैतन्य महाप्रभुका संक्षिप्त जीवन-चरित्र

स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण अपनी अन्तरङ्गा स्वरूपशक्ति श्रीमती राधारानीके अप्राकृत प्रेमसे सर्वदा आकर्षित रहते हैं। श्रीकृष्णलीलामें रसिकशेखर भगवान् श्रीश्यामसुन्दरकी तीन वाञ्छाओंका आस्वादन अपूर्ण रह गया था। अपनी उन तीन अपूर्ण वाञ्छाओंको पूर्ण रूपसे आस्वादन करनेके लिए वे श्रीमती राधारानीके आन्तरिक भाव और उनकी अङ्गकान्तिको ग्रहण करके इस जगत्में श्रीगौरहरिके रूपमें अवतीर्ण हुए। श्रीकृष्णकी वे तीन वाञ्छाएँ थी—(१) श्रीराधाजीकी प्रणय-महिमा कैसी है? (२) मेरी अद्भुत मधुरिमा, जिसका आस्वादन राधाजी करती हैं, वह कैसी है? एवं (३) मेरे माधुर्यका आस्वादन करके श्रीमती राधिकाको कैसा सुख प्राप्त होता है?

इसके अतिरिक्त श्रीगौरहरि चिन्मय जगत्के सर्वोपरि प्रकोष्ठ श्रीवृन्दावनके व्रजवासियोंकी अप्राकृत प्रेम-भावनाको कलियुग (शठता और कलहके युग) के पतित जीवोंको प्रदान करनेके उद्देश्यसे इस जगत्में अवतीर्ण हुए थे। व्रजवासी श्रीकृष्णके प्रति ऐश्वर्यज्ञानसे रहित होकर अर्थात् उनकी भगवत्ताको भुलाकर उनके प्रति लौकिक सद्बन्धुवत् भावसे युक्त होकर स्वाभाविक अनुरागसे उनकी सेवा करते हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु विशेष रूपसे जगत्-जीवोंको व्रजधामका सर्वोच्च प्रेम अर्थात् व्रजगोपियोंका श्रीकृष्णके प्रति शुद्ध-

अप्राकृत प्रेम प्रदान करनेके लिए आये थे। विशेषतम रूपसे श्रीकृष्णकी प्रियतमा शिरोमणी श्रीमती राधाजीकी एकान्तिक अनुगत दासियोंका दिव्य-प्रेम ही जगत्-जीवोंके प्रति उनका अपूर्व दान है। समस्त प्रकारके दिव्य-प्रेम अर्थात् दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर-प्रेममें यह मधुर अर्थात् गोपीप्रेम ही सर्वोत्तम है। परम करुणामय श्रीमन्महाप्रभुने इस गोपीप्रेमको ही जाति, धर्म, वर्ण आदि किसी प्रकारके भेद-भावसे रहित होकर उत्तम-अधम सभीको प्रदान किया। इस प्रकार समस्त अवतारोंमें श्रीचैतन्य महाप्रभुकी करुणा अभूतपूर्व एवं अद्वितीय हैं। वैष्णव पदकर्त्ता श्रीनरहरि ठाकुरने गान किया है—

(यदि) गौराङ्ग नहित, तबे कि हइत, केमने धरित दे?
राधार महिमा, प्रेमरस-सीमा, जगते जाना'त के??
मधुर वृन्दा-,विपिन-माधुरी, प्रवेश चातुरी सार।
वरज-युवती, भावेर भकति, शकति हइत कार??
गाओ पुनः पुनः, गौराङ्गेर गुण, सरल हइया मन।
ए भव-सागरे, एमन दयाल, ना देखि जे एकजन॥
गौराङ्ग बलिया, ना गेनु गलिया, केमने धरिनु दे।
नरहरि-हिया, पाषाण दिया, केमने गड़ियाछे॥

अहो! यदि राधाभाव एवं कान्तिके द्वारा देदीप्यमान श्रीकृष्णस्वरूप गौरहरि इस जगत्में करुणापूर्वक अवतीर्ण नहीं होते तो हमारा क्या होता? किस प्रकार हम अपने देह-प्राण धारण करते? प्रेमरसकी चरमसीमा-स्वरूप श्रीमती राधिकाजीकी महिमाका इस जगत्में कौन परिचय दे पाता?

श्रीधाम वृन्दावनके मधुररसकी माधुरीमें किसका प्रवेश हो पाता? यह उज्जवलरस माधुरी ही समस्त प्रकारकी माधुरियोंकी खान है तथा उसमें प्रवेश करना ही चतुरताका सार—बुद्धिमताकी चरमसीमा है। [अर्थात् व्रजरमणियोंकी भाँति व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णके प्रति पारकीय मधुरभावरूप उन्नत उज्ज्वलरसभक्तिमें प्रवेश करनेकी किसकी शक्ति थी?] अतः हे भाइयो! सरल एवं निष्कपट मनसे श्रीगौरसुन्दरके गुणोंका पुनः-पुनः गान करो, क्योंकि मैं इस भवसागरमें उनके जैसा दयालु अन्य कोई नहीं देख रहा हूँ। पदकर्त्ता श्रीनरहरि ठाकुर कह रहे हैं—हाय! नरहरिका (मेरा) हृदय पाषाणके द्वारा कैसा गठित हुआ है? 'गौराङ्ग' नामका उच्चारण करनेपर भी मेरा हृदय द्रवित नहीं हुआ। मैं अभी तक किस प्रकार प्राण धारण किये हूँ?

स्वयं-भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण इस जगत्‌में १४८६ ई० में फाल्गुन मासकी पूर्णिमा तिथिको चन्द्रग्रहणके समय पश्चिम बङ्गालके श्रीमायापुर (नवद्वीप) धाममें श्रीगौरहरिके रूपमें आविर्भूत हुए थे। पारम्पारिक प्रथाके अनुसार उस चन्द्रग्रहणके समय नवद्वीपके असंख्य भक्तजन पतित-पावनी गङ्गाके पवित्र जलमें स्नान करते हुए अत्यन्त श्रद्धापूर्वक भगवान्‌के मङ्गलमय नामोंका कीर्त्तन कर रहे थे।

श्रीगौरहरिने बाल्यकालमें अपना परिचय गुप्त रखकर पिता-माता, बन्धु, आत्मीय-परिजन एवं नवद्वीपवासियोंके साथ विविध लीलाओंका आस्वादन किया। उन्होंने पहले श्रीमती लक्ष्मीप्रियादेवी एवं उनके नित्यधाममें गमनके पश्चात् माताके

विशेष अनुरोधपर मूर्त्तिमान भक्तिदेवी श्रीविष्णुप्रियादेवीका पाणिग्रहण किया।

श्रीगौरहरिने पिता श्रीजगन्नाथ मिश्रके अप्रकट होनेपर उनके पिण्डदानके लिए गया तीर्थमें गमन किया। वहींपर श्रीईश्वरपुरीपादके साथ श्रीगौरहरिका साक्षात्कार हुआ एवं जगत्-वासियोंको सद्गुरुका चरणाश्रय करनेकी शिक्षा प्रदान करनेके लिए उन्होंने श्रीईश्वरपुरीपादसे दीक्षा ग्रहण करनेकी लीलाका अभिनय किया। श्रीईश्वरपुरीपादसे दीक्षामन्त्र प्राप्त करके श्रीगौरहरि नवद्वीप लौट आये तथा जगत्-जीवोंके कल्याणके लिए वहाँ अपने आचरण द्वारा उन्होंने नाम-सङ्कीर्त्तनरूपी परम-धर्मकी शिक्षा प्रदान की। श्रीगौरहरि भगवान्के पवित्र नाम-कीर्त्तन द्वारा दिव्योन्माद दशाको प्राप्त होते एवं सभीको सर्वदा भगवान्का नाम उच्चारण करनेमें अनुप्राणित करते।

चौब्बीस वर्षकी आयुमें श्रीगौरहरिने सन्यास ग्रहण किया तथा उनका नाम हुआ श्रीकृष्णचैतन्य। शीघ्र ही उन्होंने श्रीनवद्वीपधामसे श्रीजगन्नाथपुरीमें गमन किया। तत्पश्चात् छः वर्षोंमें उन्होंने दक्षिण भारत और वृन्दावन परिभ्रमणकर सभी जीवोंको नाम-सङ्कीर्त्तन और कृष्णप्रेममें निमग्न कर दिया। श्रीपुरीधाममें लौट आनेपर श्रीचैतन्य महाप्रभुकी अन्तर्दशा अवर्णनीय सीमा तक वर्धित होने लगी एवं वे अपने नित्य परिकरोंके साथ श्रीमती राधारानीके विप्रलम्भ-भावका आस्वादन करने लगे एवं साथ ही उन्होंने समस्त जगत्-वासियोंको 'स्वभक्तिश्री' अर्थात् अपनी भक्तिकी शोभाका

दान देकर उज्जवलरसकी तरङ्गोंमें निमग्न कर दिया। श्रीचैतन्य महाप्रभुने परवर्त्ती अठारह वर्ष श्रीजगन्नाथपुरीमें अवस्थानकर राधाभावका आस्वादन किया तथा अन्तमें श्रीटोटा-गोपीनाथके श्रीविग्रहमें प्रवेशकर अपनी दिव्य अन्तर्धान-लीला प्रकाशित की।

उपसंहारमें श्रीचैतन्य महाप्रभुके दानकी विशेषता एवं उनकी शिक्षाका सार है—शुद्धभक्तिकी चरमसीमा-स्वरूप व्रजगोपियोंके श्रीकृष्णके प्रति प्रेमकी महिमाका प्रचार एवं वैसे प्रेमकी प्राप्ति। श्रीमन्महाप्रभुकी शुद्ध-धारामें आनेवाले अनुरागी भक्तों एवं उनके अनुगतजनोंके द्वारा व्रजगोपियोंके प्रेमकी महिमा आज भी सम्पूर्ण विश्वमें प्रचारित हो रही है। ऐसे अनुरागी भक्तोंमें हमारे श्रील गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजका अग्रगण्य रूपमें विशेष योगदान रहा है।

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका संक्षिप्त परिचय

श्रील गुरुदेव श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज १९२१ ई॰ में मौनी अमावस्याकी शुभ तिथिपर भारतवर्षके बिहार राज्यके बक्सर जिलेमें स्थित तिवारीपुर ग्राममें एक शुद्ध-वैष्णव परिवारमें आविर्भूत हुए थे।

१९४६ ई॰ में श्रील गुरुदेवको अपने श्रीगुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजका प्रथम दर्शन प्राप्त हुआ एवं उसी समयसे श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा आचरित और प्रचारित गौड़ीय-वैष्णवधर्मके प्रति उनका सम्पूर्ण रूपसे समर्पित जीवन आरम्भ हुआ।

जगत्के पतित जीवोंके नित्य कल्याणके लिए उनके श्रीगुरुदेवने उन्हें अपने साथ सम्पूर्ण भारतमें श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी-प्रचारके कार्यमें एवं विभिन्न गुरुत्वपूर्ण दायित्व प्रदानकर मठ-मन्दिरकी अनेक सेवाओंमें सक्रिय आत्मनियोग कराया। प्रतिवर्ष श्रीचैतन्य महाप्रभुकी आविर्भाव-तिथिके उपलक्ष्यमें श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके समय नवद्वीप-धाममें असंख्य भक्तोंका समागम होता है। उस समय श्रील गुरुदेवको उनके श्रीगुरुपादपद्मके द्वारा श्रीनवद्वीपधाम परिक्रमाके कार्यभारके सञ्चालनका दायित्व प्रदान किया जाता था। उनके गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने १९५४ ई॰ में उन्हें मथुरा स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके

मठ–रक्षकके रूपमें नियुक्त किया एवं प्रमुख गौड़ीय–वैष्णवाचार्योंके ग्रन्थोंका राष्ट्रभाषा हिन्दीमें अनुवाद करनेका निर्देश प्रदान किया। श्रील गुरुदेवने अपने सम्पूर्ण जीवनकाल तक परम उत्साह और यत्नके साथ इन सभी सेवाकार्योंको सम्पन्न किया, जिसके फलस्वरूप राष्ट्रभाषा हिन्दीमें प्रायः पचाससे भी अधिक पारमार्थिक गौड़ीय ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। वर्त्तमानमें इन सभी ग्रन्थोंका अँग्रेजी तथा विश्वकी अन्यान्य प्रमुख भाषाओंमें अनुवाद हो रहा है।

श्रील गुरुदेवने श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणी एवं उसके अन्तर्गत गौड़ीय–दर्शनका प्रचार करनेके लिए बहुत वर्षों तक सम्पूर्ण भारतका परिभ्रमण किया एवं १९९६ ई॰ से उन्होंने विदेशमें प्रचारसेवा आरम्भ की। परवर्त्ती पन्द्रह वर्षोंमें उन्होंने सम्पूर्ण विश्वकी प्रायः चौंतीस बार परिक्रमा की है। क्या देश, क्या विदेश, उनका प्रचारकार्य सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रधान परिकर श्रील रूप गोस्वामी एवं विश्वव्यापी गौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता जगत्–गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपादकी विचारधाराको केन्द्रितकर उस धाराके अनुगत रहा। यदि कहीं भक्तिसिद्धान्तोंमें कुछ भूल दिखलायी देती अथवा श्रीमन्महाप्रभुके आविर्भावके मुख्य कारण अस्पष्ट होते अथवा कहीं पर भक्तिशास्त्रोंकी व्याख्यामें कुछ परिवर्त्तन दिखलायी देता, तो श्रील गुरुदेव निर्भीकतापूर्वक शास्त्रप्रमाण एवं युक्तियोंके द्वारा उन विचारोंका यथास्थान खण्डन करके यथार्थ सत्यको स्थापित करते थे। इस प्रकार वर्त्तमान समयमें उन्होंने गौड़ीय–

वैष्णव-सम्प्रदायकी विचारधारा, महिमा और गौरवका संरक्षणकर एक वास्तविक आचार्यका कार्य किया है।

श्रीलगुरुदेव—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने २९ दिसम्बर, २०१० ई॰ को श्रीजगन्नाथपुरी धामके अन्तर्गत चक्रतीर्थ स्थित जयश्रीदामोदर गौड़ीय मठमें प्रायः नब्बे वर्षकी आयुमें अपनी भौमजगत्की लीला सम्वरण की। श्रीजगन्नाथ पुरीसे यात्रा करके श्रीचैतन्य महाप्रभुके विशेष प्रतिनिधि एवं उनकी अद्वितीय करुणाके मूर्त्तिमान विग्रह श्रील गुरुदेवने श्रीनवद्वीपधाममें समाधि ग्रहण की। श्रील गुरुदेव अपनी अमृतमय-अप्राकृत-वाणी एवं अपने शरणागत-भक्तोंके हृदयोंमें चिरकालके लिए ही विराजमान हैं।